ऐसा सुच्छम सरूप देखाए के, दे धाम करी चेतन।
इत विलास कई बिध के, मांहें सिरदारी सैयन।। ३२ ।।

परमधाम का ऐसा सूक्ष्म (चेतन) स्वरूप दिखाकर तथा परमधाम की पहचान कराकर वहां के कई तरह के सुखों को बताया। ब्रह्मसृष्टियों में मुझे सिरदार बना दिया।

ऐसी साख देवाई कर सनमंध, आतम करी जाग्रत।
सो आए धनी मेरे धाम से, कही विवेके कयामत।। ३३ ।।

ऐसी गवाहियां दिलवा कर निसबत की पहचान कराई जिससे मेरी आत्मा जागृत हो गई। मेरे धाम के धनी ने आकर के कयामत के भेद भी बताए।

ऐसे कई सुख परआतम के, अनुभव कराए अंग।
तो भी इस्क न आइया, नेहेचल धनी सों रंग।। ३४ ।।

धनी ने परआतम के ऐसे कई सुखों का अनुभव कराया। फिर भी मेरे अन्दर इश्क नहीं आया और न अखण्ड में धनी से मिलने की चाहना हीं आई।

इन धाम की लीला मिने, इन धनी की अरधांग।
तो भी प्रेम ना उपज्या, कोई आतम भई ऐसी अंध।। ३५ ।।

मैं उस परमधाम में धनी की अंगना हूं और आनन्द की लीला करती हूं। इतना समझकर भी मुझे प्रेम नहीं आया। आत्मा ऐसी अन्धी हो गई।

तब आप अंतरध्यान होए के, भेज दिया फुरमान।
हम को इस्क उपजावने, इत कई बिध लिखे निसान।। ३६ ।।

तब आप सतगुरु श्री देवचन्द्रजी के तन को छोड़कर अन्तर्ध्यान हो गए और हम में इश्क पैदा करने के लिए हवसा में विरह की वाणी बख्शीश की जिससे घर की पहचान होती है।

इन बिध देने ईमान, उपजावने इस्क।
सो इस्क बिना न पाइए, ए जो नूर तजल्ला हक।। ३७ ।।

इस तरह से ईमान देने के लिए और इश्क पैदा करने के लिए धनी ने मेहर की, क्योंकि इश्क के बिना पारब्रह्म धाम धनी की पहचान नहीं की जा सकती।

।। प्रकरण ।। ७४ ।। चौपाई ।। ९९६ ।।

राग श्री साखी

मेरे धनी धाम के दुलहा, मैं कर न सकी पेहेचान।
सो रोऊं मैं याद कर कर, जो मारे हेत के बान।। १ ।।

हे मेरे धनी! धाम के दूल्हा मैं आपको पहचान नहीं सकी। आपने मुझे मेरी भलाई के वास्ते जो बातें बताई थीं, उन वचनों को याद कर मैं अब रोती हूं।

सोई दरद अब आइया, लग्या कलेजे घाए।
अब ए अचरज होत है, जो मुरदे रहत अरवाहे।। २ ।।

अब उन्हीं बातों के याद आने से कलेजे में घाव लग रहे हैं। फिर भी हैरानी इस बात की है कि यह तन खड़ा क्यों है? मर क्यों नहीं जाता?

Nijanand App

अपनायत केती कहूं, जो करी हमसों तुम।
नींद उड़ाई बुलावने, पोहोंचाया कौल हुकम।। ३ ।।

हे धनी! आपने मुझे अपनी जानकर मेरे अज्ञान की नींद उड़ाई और अपने वायदे को पूरा किया।

क्या रोई क्या रोऊंगी, उठी आग इस्क।
थिर चर सारा जलिया, जाए झालां पोहोंची हक।। ४ ।।

अब विरह होने से इश्क जागा है। अब तन की सारी चाहना जलकर राख हो गई है। धनी से मिलने के लिए मैं तड़प रही हूं।

जो साहेब मैं देखिया, सो मिले होए सुख चैन।
तब लग आतम रोवत, सूके लोहू पानी नैन।। ५ ।।

जिस धनी को मैंने देखा है उनको मिलने से ही सुख और चैन होगा। जब तक वह धाम धनी मिल नहीं जाते तब तक आंखों से आंसू आते रहेंगे और शरीर का खून जलता रहेगा।

जो पट आड़े धाम के, मैं ताए देऊं जार बार।
कोई बिध करके उड़ाइए, ए जो लाग्यो देह विकार।। ६ ।।

परमधाम के रास्ते में जो रुकावटें आ रही हैं मैं उन्हें जला दूंगी। मेरे तन में माया मोह के जो विकार हैं, उनको किसी न किसी तरह से समाप्त करूंगी।

बन बेली सब रोइया, और जंगल जानवर।
कई पसु पंखी केते कहूं, जले जो दरदा कर।। ७ ।।

मेरे तन रूपी जंगल की बेलें रो रही हैं। जंगल के जानवर, पशु, पक्षी सब विरहा के दर्द में जल रहे हैं, अर्थात् मेरे तन के सब गुण, अंग, इन्द्रियां आपके विरह के दर्द से जल रहे हैं।

जंगल रोया जलिया, जल बल हुआ खाक।
इनमें पंखी क्यों रहे, जो पर जल हुए पाक।। ८ ।।

मेरा तन रूपी जंगल जलकर खाक हो गया, अर्थात् उसका विनाश हो गया। अब इस तन में जीव रूपी पक्षी जिसके गुण, अंग, इन्द्रियां विरह से निर्मल हो गई हों, वह कैसे रह सकता है?

पहाड़ रोए टूटे टुकड़े, हुए हैं भूक भूक।
भवजल रोया सागर, सो गया सारा सूक।। ९ ।।

काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार रूपी पहाड़ भी रो-रोकर टूटे और टुकड़े होकर चूर-चूर हो गए। शरीर के अन्दर का पानी रो-रोकर भवसागर की तरह सूख गया।

भोम रोई भली भांत सों, टूट गई रसातल।
नाग लोक सब रोइया, सो पड़या जाए पाताल।। १० ।।

मेरे पांवों से लेकर सिर तक सारे अंग विरहा की अग्नि में रो रहे हैं।

रोए पांच तत्व तीन गुन, निरंजन निराकार।
रोई द्वैत पुरुख प्रकृती, पट उड़यो अंतर आकार।। ११ ।।

मेरे पांच तत्व और तीन गुण, निरंजन, निराकार, पुरुष, प्रकृति, सब गुण, अंग, इन्द्रियां, माया और अहं सभी रोए और अन्दर के विकार के परदे उड़ गए।

Nijanand App

आकास रोया सब अंगों, मोह अहं गल्यो चहुंओर।
निराकार निरंजन गलया, जाए रह्या अंतर ठौर।। १२ ।।

आकाश रोया, मोह तत्व और अहंकार का आवरण रोया। निराकार और निरंजन तक सब विरह में गल गया। अब अन्तर्मन में जीव के लिए कहीं ठिकाना नहीं रहा।

इस्कें आग फूंक दई, लाग्यो सब ब्रह्माण्ड।
जब पोहोंची झालां अंतर लों, तब क्यों रहे ए पिंड।। १३ ।।

मेरे अन्दर विरह की आग ऐसी जली कि सारा तन मिट्टी हो गया। जब उस आग की लपटें अन्दर चली गईं तो यह शरीर कैसे रह सकता है?

आग इस्क ऐसी उठी, लोहू रोया वैराट।
खाक हुआ जल बल के, उड़ गया सब ठाट।। १४ ।।

इश्क के विरह की आग ऐसी लगी कि सारा तन रूपी ब्रह्माण्ड रोने लगा और शरीर का सारा ठाट-बाट समाप्त हो गया।

महामत कहे मेहेबूब जी, खेल देख्या चाहया दिल।
हांसी करी भली भांत सों, अब उठो सुख लीजे मिल।। १५ ।।

श्री महामतिजी कहते हैं, हे मेहबूब जी! जैसा खेल हमने चाहा था वैसा ही खेल हमने देखा है। आपने हमारी अच्छी हंसी उड़ाई (आपने हमसे अच्छा मजाक किया)। अब उठो मिलकर आनन्द मनाएं।

॥ प्रकरण ॥ ७५ ॥ चौपाई ॥ १०११ ॥

राग श्री

निज नाम सोई जाहेर हुआ, जाकी सब दुनी राह देखत।
मुक्त देसी ब्रह्मांड को, आए ब्रह्म आतम सत।। १ ।।

आज दिन तक दुनियां जिसके नाम की इन्तजार में थी कि उनके आने से अखण्ड मुक्ति मिलेगी, वह मुक्ति के देने वाली ब्रह्मसृष्टि और भवसागर से जीवों को पार उतारने वाला पारब्रह्म का नाम आ गया है, जिससे सारे जीवों और ब्रह्माण्ड को मुक्ति मिल जाएगी।

हो मेरी सत आतमा, तुम आओ घर सत खसम।
नजर छोड़ो री झूठ सुपन, आए देखो सत वतन।। २ ।।

हे मेरी परमधाम की सच्ची आत्माओ! अपने अखण्ड घर परमधाम में अपने सच्चे धनी के पास आओ। झूठे संसार से नजर को हटाकर अपने अखण्ड घर को देखो।

तुम निरखो सत सरूप, सत स्यामाजी रूप अनूप।
साजो री सत सिनगार, विलसो संग सत भरतार।। ३ ।।

तुम अपने अखण्ड तनों को देखो। सुभान श्यामाजी का अनुपम स्वरूप देखो तथा अपने अखण्ड धनी से विलसने के लिए अपने अखण्ड सिनगार को धारण करो (अर्थात् संसार में सच्चे अंग के भाव से चलो)।

सत धनी सों करो हांस, पीछे करो प्रेम विलास।
सत बरनन कीजो एह, उपजे सत प्रेम सनेह।। ४।।

अपने सच्चे धनी से प्रेम की मीठी मीठी बातें करो। फिर उनसे प्रेम और आनन्द की लीला करो। सुन्दरसाथ को ऐसी सच्ची वाणी सुनाओ जिससे उनको भी धनी से सच्चा प्रेम हो जाए।

Nijanand App